विषय	हिन्दी
प्रश्नपत्र सं. एवं शीर्षक	**P1 : आधुनिक हिंदी कविता-1**
इकाई सं. एवं शीर्षक	**M20 : अज्ञेय की कविता में प्रतीक और बिंब**
इकाई टैग	**HND_P1_M20**

निर्माता समूह	
प्रमुख अन्वेषक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com
प्रश्नपत्र समन्वयक	**प्रो. चित्तरंजन मिश्र** प्रोफेसर, हिंदी एवं भारतीय भाषा विभाग, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर (उ.प्र.) ईमेल : chittranjanmishra@gmail.com
इकाई लेखक	**डॉ. सूर्यनाथ सिंह** जनसत्ता, दिल्ली ईमेल : suryansingh@gmail.com
इकाई समीक्षक	**प्रो. आनंद वर्धन शर्मा** प्रतिकुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : pvctomgahv@gmail.com
भाषा संपादक	**श्री अरुण कुमार त्रिपाठी** प्रोफेसर एडजंक्ट महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : tripathiarunk@gmail.com

पाठ का प्रारूप

1. पाठ का उद्देश्य
2. प्रस्तावना
3. प्रतीक और बिंब का अर्थ
4. भारतीय कविता में प्रतीक और बिंब
5. यथार्थ और प्रतीक-बिंब योजना
6. अज्ञेय की कविता में बिंब और प्रतीक
7. निष्कर्ष

1. पाठ का उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के उपरांत आप-

- कविता में प्रतीक और बिंब का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे,
- भारतीय कविता में प्रतीक और बिंब का स्वरूप बता सकेंगे,
- यथार्थ और प्रतीक-बिंब योजना में अंतर्संबंधों को रेखांकित कर सकेंगे,
- अज्ञेय की कविताओं में प्रतीक और बिंब योजनाओं को चिह्नित कर सकेंगे।

2. प्रस्तावना

आप जानते हैं कि कविता में कोई बात सीधे-सीधे न कह कर कुछ वक्रता के साथ कही जाती है। इसी से उसमें कथन की प्रभावोत्पादकता और रसात्मकता बढ़ जाती है। यही वक्रता कविता को गद्य से अलग करती है। गद्य में वस्तु को उसके वास्तविक रूप में प्रस्तुत किया जाता है, किंतु कविता में वही वस्तु दूसरे रूप में आकार ले लेती है। गद्य में कमल एक फूल के रूप में अपनी वास्तविक पहचान के साथ उपस्थित होता है, पर वही कविता में किसी सुंदर स्त्री के मुख का उपमान बन जाता है। कभी किसी की महिमा का बखान करते हुए कवि उसके चरणों की तुलना कमल से करने लगता है। यानी कमल का फूल, फूल ही रहता है, पर कविता में वह किसी सुंदर स्त्री के मुख का, तो किसी देवता के चरणों का प्रतीक बन जाता है। आपके मन में छवि उभरती है कमल के फूल की और आप उसी रूप में सौम्य, कोमल स्त्री के मुख की कल्पना करने लगते हैं, जिसकी तुलना कमल से की गई है। कमल का फूल वास्तविक रूप में न रह कर एक प्रतीक बन जाता है। जिस रचनाकार की कल्पना शक्ति जितनी तीक्ष्ण होगी, उसकी कविता में बिंब और प्रतीक योजनाएं उतनी ही सुंदर बनेंगी।

3. प्रतीक और बिंब का अर्थ

प्रतीक

प्रतीक का अर्थ है किसी वस्तु को उसके वास्तविक रूप में न देख कर दूसरी किसी वस्तु, अवस्था, व्यक्ति, स्थान आदि के रूप में प्रस्तुत करना। प्रतीक के लिए अंग्रेजी शब्द है- सिंबल। यानी किसी वस्तु, चिह्न आदि को दूसरी किसी वस्तु की पहचान के रूप में चिह्नित कर देना प्रतीक व्यवस्था है। जरूरी नहीं कि दोनों वस्तुओं का स्वरूप आपस में मिलता हो। हां, कुछ मामलों में दोनों के गुणों में समानता देखी जा सकती है। उदाहरण के लिए देवताओं की सवारियों के प्रतीक रूप में शेर, गरुण आदि पशु-पक्षियों को देखना। राष्ट्रों के प्रतीक रूप में उनके झंडों और उनके ऊपर बने चिह्नों को देखना। प्रतीकों की परंपरा बहुत पुरानी है। मनुष्य ने अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए सबसे पहले प्रतीकों का सहारा लिया। उसने प्रतीक चिह्नों के जरिए लिखने का तरीका निकाला। आज भी जापानी, चीनी आदि भाषाओं में प्रतीकाक्षरों का इस्तेमाल किया जाता है। इसी तरह रंगों का प्रतीक रूप में इस्तेमाल होने लगा। आज भी सड़कों पर यातायात को नियंत्रित-संचालित करने के लिए लाल, हरी, पीली बत्तियों और विभिन्न प्रकार के संकेतों का प्रतीक रूप में प्रयोग होता है। कुछ प्रतीक सदियों से रूढ़ हो गए हैं, जैसे शेर वीरता का, गीदड़ कायरता का, लोमड़ी चतुराई का, सफेद रंग पवित्रता का, हरा रंग शांति का प्रतीक बन गए हैं।

दरअसल, मनुष्य का पूरा जीवन प्रतीकों से भरा पड़ा है। वह प्रतीकों के माध्यम से ही सोचता है। ऐसे में साहित्य भला कहां तक अछूता रह पाता। साहित्य में हर युग का रचनाकार अपने ढंग से नए प्रतीक गढ़ता और कविता में चारुता लाने का प्रयास करता रहा है। संस्कृत काव्य से लेकर समकालीन साहित्य तक नए प्रतीकों की रचना होती आई है। बल्कि अक्सर एक ही प्रतीक को नए-नए तरीके से प्रस्तुत करने के प्रयास भी देखे जाते हैं। जैसे नदी अगर

किसी कवि के यहां छरहरी स्त्री के प्रतीक रूप में आती है तो कहीं सामाजिक धारा के प्रतीक रूप में। कहना न होगा कि जहां बात को सीधे तरीके से कहने में आसानी न हो या चारुता उत्पन्न न होती हो वहां प्रतीकों के माध्यम से संवेदना को जगाने में काफी मदद मिलती है।

बिंब

बिंब का अर्थ है परछाई, चित्र, तस्वीर, अक्स। अंग्रेजी में इसके लिए इमेज शब्द का प्रयोग होता है। इमेज को हिंदी में चित्र, प्रतिमा भी कहा जाता है। जैसे किसी परछाईं को देख कर आप समझ जाते हैं कि वह पेड़ की छाया है, किसी पशु-पक्षी या मनुष्य की है, उसी तरह कविता में भी बिंबों के माध्यम से आप समझ जाते हैं कि बात किसके बारे में की जा रही है। इस तरह बिंब-विधान के माध्यम से कविता में न सिर्फ कथ्य को रोचक तरीके से प्रस्तुत करने में, बल्कि पाठक के मन में एक प्रभावशाली तस्वीर रचने में भी मदद मिलती है।

बिंब के जरिए कवि प्रस्तुत संदर्भ को किसी अप्रस्तुत विधान से जोड़ कर कविता में चारुता लाने का प्रयास करता है। इसमें प्रकृति की दशाएं सबसे सहज भाव से मददगार साबित होती हैं। बादल, वर्षा, हवा, धूप, सुबह, दोपहर, शाम, अंधेरा, उजाला, क्षितिज, आसमान, पर्वत, फूल, पेड़, झरने, तालाब- सब कुछ कविता में बिंब रचने में मददगार साबित हुए हैं। कविता में बिंब संवेदना को तीक्ष्ण बनाने, उसका प्रभाव बढ़ाने का काम करता है। प्राचीन काव्यशास्त्र में कहा गया कि कवि पहले अपने देखे, अनुभव किए दृश्य, स्थिति, सौंदर्य आदि की कल्पना के आधार पर प्रतिमा गढ़ता है, उसकी छवि तैयार करता है, फिर उसे शब्दों, रंगों आदि के माध्यम से आकार देता है।

जैसे अज्ञेय की 'नदी के द्वीप' कविता में नदी और द्वीप के बिंब विधान के जरिए व्यष्टि और समष्टि के संबंधों को निरूपित करने की कोशिश की गई है। यहां आप देखें कि कवि ने अपनी कल्पना शक्ति के आधार पर नदी और द्वीप के दृश्य को मनुष्य और समाज के संबंधों के बिंब के रूप में उपस्थित किया है। मनुष्य और समाज की छवि को इस तरह गढ़ना असाधारण है। इसमें द्वीप को व्यक्ति के प्रतीक रूप में देख सकते हैं तो नदी को समाज की धारा के प्रतीक रूप में।

4. भारतीय कविता में प्रतीक और बिंब

कविता में प्रतीकों का इस्तेमाल संस्कृत साहित्य से ही शुरू हो गया था। भारतीय दर्शन में भी इसके महत्त्व को लेकर काफी कुछ लिखा, कहा गया है। रहस्यवादियों ने कविता के लिए संधा या संध्या भाषा को महत्त्वपूर्ण माना। एक आंदोलन के रूप में साहित्य में प्रतीकवाद का आरंभ उन्नीसवीं शताब्दी के अंत यानी 1885 में फ्रांस में हुआ। कहा गया कि कलात्मक अनुभूति के दो पक्ष हैं- प्रतिमा द्वारा सीधे साक्षात्कार और दूसरा प्रतीक द्वारा आदर्श स्थिति में व्याख्यायित करने की कोशिश। यानी किसी अनुभव को हम उसे किसी माध्यम से मूर्त रूप देकर, कोई आकार देकर उसका बोध कराएं या फिर किसी प्रतीक रूप में उसकी कल्पना कर उस अनुभव की व्याख्या करने की चेष्टा करें। जिस समय फ्रांस में प्रतीकवाद का जन्म हुआ (1885) उस समय तक पूरा पश्चिमी जगत वैज्ञानिक तर्कों की गिरफ्त में आ चुका था। हर मान्यता, हर चलन को तर्कों पर परख कर देखा जाने लगा था। रचना के स्तर पर यथार्थवाद का चलन चरम पर था। साहित्य और कलाओं में भी वही रचने-दिखाने का प्रयास हो रहा था जो वास्तविक जीवन में हो रहा था। वस्तुएं उसी रूप में कलाओं में आ रही थीं, जैसी वास्तव में वे दिखती थीं। लेकिन जल्दी ही कलाकारों और साहित्यकारों का यथार्थ-चित्रण से मोहभंग हो गया। उन्होंने अनुभव किया कि इस तरह बाह्यजगत का हूबहू चित्रण कला और साहित्य का उद्देश्य नहीं हो सकता। कला का मकसद मनुष्य के अंतर्मन को

चित्रित करना है, उसकी सौंदर्यानुभूति का विकास और विस्तार करना है, इसलिए यथार्थवाद इस मकसद को पूरा नहीं कर सकता। इस तरह उन्होंने बाह्य जगत का हूबहू चित्रण छोड़ कर प्रतीकों के माध्यम से, पूरे आलंकारिक तरीके से, अपनी कल्पनाशक्ति का प्रयोग करते हुए रचना शुरू कर दिया। इस तरह प्रतीकवाद का जन्म हुआ।

इस तरह कला एक बार फिर उन्हीं पुरातन मूल्यों की ओर, अपनी परंपराओं की ओर लौटने की कोशिश कर रही थी, जिन्हें यथार्थवाद के नाम पर जानबूझ कर छोड़ दिया गया था। साहित्य में भी यही प्रवृत्ति पनपी।

आप देखें कि यही प्रवृत्ति प्रयोगवादी कविता में भी दिखाई देती हैं। मगर हिंदी कविता में प्रतीक-योजना का चलन प्रयोगवाद से नहीं शुरू हुआ। इसके बहुत पहले से कविता में प्रतीकों का सक्षम उपयोग होता आ रहा था। जैसा कि हम रहस्यवाद और बौद्ध दर्शन में संधा भाषा और प्रतीत्यसमुत्पाद के रूप में प्रतीकों का चलन पाते हैं, भारतीय कविता में प्रतीक योजना की बहुत पुरानी परंपरा है। आधुनिक कविता की बात करें तो छायावाद में प्रतीकों के माध्यम से अपनी भावनाएं व्यक्त करने की बहुत सशक्त परंपरा दिखाई देती है। महादेवी वर्मा की प्रायः हर कविता में प्रतीकों के जरिए निस्सीम जगत से अपने को जोड़ने तथा अपने मन की पीड़ा को अभिव्यक्त करने की कोशिश है। जयशंकर प्रसाद का 'आंसू' काव्य तो पूरा प्रतीकों के माध्यम से ही बात करता है। उनके 'कामायनी' महाकाव्य में प्रतीकों का सुंदर और सशक्त प्रयोग है। पंत और निराला हालांकि बाद के दिनों में प्रगतिवादी चेतना से प्रभावित हुए थे, पर उनके यहां भी प्रतीक-योजना सशक्त रूप में विद्यमान है।

प्रगतिवाद के उभार के बाद छायावादी कविता में प्रतीकों के माध्यम से रहस्यमयी बातें करने के चलन का तीखा प्रतिकार हुआ। कोमलकांत पदावली में लिखी जा रही कविता को यथार्थ से दूर कह कर उसे नकारने की कोशिश की जाने लगी। कहा गया कि जो प्रत्यक्ष घटित हो रहा है, जो मनुष्य के जीवन की दैनिक जरूरतों से जुड़ी समस्याएं हैं वही कविता में आनी चाहिए। यथार्थ प्रतीकों में व्यक्त नहीं हो सकता। इस तरह प्रगतिवादी दौर में आम आदमी के दुख-दर्द की कविताओं का चलन बढ़ा। लेकिन हकीकत यह है कि वहां भी कवि प्रतीकों का मोह नहीं छोड़ पाए। जैसाकि हम शुरू में ही बात कर आए हैं, कविता में चारुता लाने के लिए कथन में बांकपन जरूरी है, यही जरूरत प्रगतिवादी दौर में भी प्रतीकों का सहारा लेने को बाध्य करती रही। केदारनाथ अग्रवाल की कविता 'ठिगना चना' और नागार्जुन की 'बादल को घिरते देखा है' कविताएँ इसका प्रमाण हैं। शमशेर बहादुर सिंह की कविताओं में प्रतीकों की भरमार है। ये सभी कवि प्रगतिवादी हैं, यथार्थ रचने वाले, पर उनके यहां भी प्रतीकों की कमी नहीं है।

कहने का तात्पर्य यह कि प्रतीकों के माध्यम से अनुभव को, संवेदना को अधिक प्रभावशाली तरीके से पाठक तक पहुंचाने में मदद मिलती है। गद्य में इसकी गुंजाइश कम होती है, पर कविता में इससे प्रभाव बढ़ जाता है।

बिंब

इसी तरह हमारे यहां प्राचीन काव्यशास्त्र में बिंब-विधान को प्रतिमाकरण से भी व्याख्यायित करने की कोशिश की गई। कहा गया कि रचनाकार सौंदर्य की रचना करता है, इसलिए वह पहले अपने देखे, अनुभव किए, रूप, रस, गंध, स्पर्श आदि की एक प्रतिमा गढ़ता है, एक छवि निर्मित करता है, फिर उसे आकार देता है। इसलिए प्राचीन काव्यशास्त्र में बिंबविधान को मानस प्रतिमा की भी संज्ञा दी गई।

संस्कृत काव्य में बिंब कवि की मानस प्रतिमा के रूप में ही अधिक दिखाई देता है। कालिदास के मेघदूत की चर्चा तो आपने सुनी-पढ़ी होगी। उसमें वे मेघ यानी बादल की प्रतिमा दूत के रूप में, संवादवाहक के रूप में गढ़ते हैं। इसी तरह संस्कृत काव्य में मानस प्रतिमाएं यानी कल्पना के आधार पर किसी प्रस्तुत वस्तु को दूसरी अप्रस्तुत वस्तु की प्रतिमा के रूप में गढ़ने की कोशिश प्रचुर मात्रा में दिखाई देती है।

जब महादेवी कहती हैं कि 'मैं नीर भरी दुख की बदली' तो आपके मन में बादल के रूप में एक ऐसी स्त्री की छवि उभरती है जो दुखी है और कभी भी रो सकती है। इसी तरह जब जयशंकर प्रसाद कहते हैं कि 'अलकें ज्यों तर्कजाल' तो स्त्री के उलझे हुए बाल ऐसे मालूम पड़ते हैं जैसे तर्क आपस में उलझे हुए हों।

बिंब-विधान में कवि की सामाजिक, आर्थिक स्थितियां भी प्रभाव डालती हैं। इन स्थितियों के चलते कवि का सौंदर्यबोध बदलता रहता है। आधुनिक कविता का सौंदर्यबोध वही नहीं है, जो कालिदास, भास आदि संस्कृत कवियों का है। वैसे ही प्रगतिवादी कवियों का सौंदर्यबोध छायावादी कवियों से भिन्न है तो इसके पीछे तत्कालीन स्थितियां जिम्मेदार हैं। यों प्रगतिवादी कविता में प्रतीकों की तरह बिंबों का मोह त्यागने की प्रवृत्ति देखी गई, पर कथन में चारुता के मोह के चलते बिंबों से उसकी दूरी पूरी तरह नहीं बन पाई। प्रगतिवादी कविता में भी बिंबों की रचना हर कहीं देखी जा सकती है। फिर प्रयोगवाद का दौर शुरू हुआ तो कविता में प्रतीक और बिंब प्रधान हो उठे। जैसा कि हम ऊपर फ्रांस में शुरू हुए प्रतीकवाद की चर्चा कर चुके हैं, भारत में प्रयोगवाद के पीछे भी कुछ हद तक उस आंदोलन का प्रभाव देखा जा सकता है।

6. अज्ञेय की कविता में बिंब और प्रतीक

अज्ञेय कविता में नए प्रयोगों के लिए जाने जाते हैं। उन्होंने न सिर्फ कविता को परंपरा और आधुनिकता के बीच सेतु की तरह कायम किया, बल्कि नए-नए प्रतीकों और बिंबों से सौंदर्यानुभूति को भी नया आयाम दिया। अज्ञेय कविता को प्रकृति और परंपरा के पास ले गए। वहां से प्रतीकों और बिंबों का सहारा लेकर उनके माध्यम से मानवीय संवेदना जगाने की पहल की। प्रगतिवादी धारा में जिस कविता को बाह्य जगत की आवश्यकताओं को रेखांकित, चित्रित करने का माध्यम माना जाने लगा था उसे उन्होंने मानवीय संवेदना का वाहक बनाया। अनुभूतियों को प्राथमिकता दी। अंतर की हलचलों को अभिव्यक्त करने का माध्यम बनाया। ऊपर हमने फ्रांस में शुरू हुए जिस प्रतीकवादी आंदोलन की बात की है, अज्ञेय ने वैसा ही आंदोलन प्रयोगवाद के रूप में शुरू किया। उन्होंने समाज में रहते हुए भी मनुष्य के स्वतंत्र अस्तित्व को महत्त्वपूर्ण माना। कविता में उस अस्तित्व को प्रतिष्ठित किया। इसे अनेक बिंबों, प्रतीकों के माध्यम से साबित करने की कोशिश भी की।

अज्ञेय अपनी कविता में प्रतीकों का प्रयोग जीवन की उल्लासपूर्ण स्थितियों को उदात्त बनाने के लिए करते हैं। उसी तरह के बिंब रचते हैं। नैराश्य के क्षण उनके यहां बहुत कम हैं। जहां हैं भी वहां उल्लास में ही उनका अवसान होता है। इसलिए उनके प्रतीक और बिंब प्रकृति से आते हैं, क्योंकि प्रकृति में नैराश्य नहीं और उदात्त भाव है। प्रकृति देना जानती है, कुछ नहीं मांगती। जो मांगता है, उसे देती है। अज्ञेय ने भी खूब लिया। हमने उनकी तीन कविताओं की व्याख्या पढ़ी। उन्हें आप बार-बार पढ़ेंगे तो बार-बार उल्लास से भरेंगे। अज्ञेय के यहां नयापन यही है कि वे प्रकृति के परंपरागत स्वरूप को नया अर्थ देते हैं। उसे देखने का नया दृष्टिकोण देते हैं। मसलन, नदी के द्वीप को ही उनसे पहले इस रूप में किसी ने नहीं देखा था जिस रूप में उन्होंने देखा। हरी घास पर बैठने का सुख सभी लेते हैं, पर

इस तरह पहले किसी ने नहीं लिया, जिस तरह अज्ञेय ने लिया। इस तरह अज्ञेय अपने प्रतीकों के जरिए, बिंबों के जरिए प्रकृति में नया रंग भरते हैं। उसे दार्शनिक ऊँचाई देते हैं।

आरोप लगते रहे कि अज्ञेय व्यक्तिवादी हैं। उनमें रूमानियत है। यथार्थ को नजरअंदाज करते हैं। मगर ऐसा नहीं है। वे प्रकृति-बिंबों और प्रतीकों के माध्यम से मनुष्य की वेदना, उसकी स्थितियों को प्रगतिवादी धारा से थोड़ा भिन्न पर लगभग उसी स्वर में व्यक्त करते हैं। यह कवितांश देखेः

'पेड़ के तने में घाव करके/ उसमें खपच्ची लगा गए हैं कि बूंद बूंद/ रिसता रहे घाव/ उन्हें चाहिए लीसा।/ मेरी छाती के घाव में भी/ लगी हैं खपच्चियां/ नीचे बंधा है/ उनका कसोरा।/ पेड़ की, मगर,/ जड़ें हैं गहरी/ वह मिट्टी से रस खींचता है।/ और मेरी जड़ों को पोषण की अपेक्षा है/ उन्हीं से/ जिन्हें अपने कसोरे में/ मेरा लहू चाहिए।'
यह तेवर क्या प्रगतिवादी धारा से भिन्न है? नहीं! यहां बिंब और प्रतीक प्रकृति से जरूर लिए गए हैं, पर वेदना को व्यक्त करने का तरीका प्रगतिवादी धारा वाला ही है।

दरअसल, अज्ञेय सौंदर्यानुभूति के कवि हैं। सौंदर्यानुभूति को अभिव्यक्त करने में प्रतीकों और बिंबों का योगदान अहम होता है। ऊपर हम फ्रांस में शुरू हुए जिस प्रतीकवादी आंदोलन की बात कर आए हैं, उसका स्वर भी तो यही था कि यथार्थ चित्रण के नाम पर प्रतीकों-बिंबों से जानबूझ कर दूरी बनाए रखना कविता के सौंदर्य पक्ष की अनदेखी करना है। अज्ञेय उसी सौंदर्य को प्रकृति के माध्यम से उकेरने की कोशिश करते रहे। प्रकृति उनके लिए सिर्फ सौंदर्य चित्रण का माध्यम नहीं, आत्मदान का भी माध्यम है। वे वन के अनगढ़पन को नहीं लेते, उसके खुलेपन को लेते हैं, जहां शब्दों की सीमा समाप्त हो जाती है। एक स्तर पर जाकर सन्नाटा भी अर्थवान हो जाता है। सन्नाटा भी छंद बन जाता है। अब देखिए, पहले कविता में जहां सन्नाटा उदासी का चित्र बन कर उभरता था, अज्ञेय ने उसे दार्शनिक स्वर देकर किस तरह अर्थवान बना दियाः

'मैं सभी ओर से खुला हूं/ वन-सा वन-सा अपने में बंद हूं/ शब्द में मेरी समाई नहीं होगी/ मैं सन्नाटे का छंद हूं।'

7. निष्कर्ष

प्रतीक यानी किसी वस्तु को उसके वास्तविक रूप में न देख कर दूसरी किसी प्रस्तुत वस्तु, अवस्था, व्यक्ति, स्थान आदि के रूप में प्रस्तुत करना। प्रतीक के लिए अंग्रेजी शब्द है- सिंबल। यानी किसी वस्तु, चिह्न आदि को दूसरी किसी वस्तु की पहचान के रूप में चिह्नित कर देना प्रतीक व्यवस्था है।

बिंब यानी परछाई, चित्र, तस्वीर, अक्स। अंग्रेजी में इसके लिए इमेज शब्द का प्रयोग होता है। इमेज को हिंदी में चित्र, प्रतिमा भी कहा जाता है। जैसे किसी परछाईं को देख कर आप समझ जाते हैं कि वह पेड़ की छाया है, किसी पशु-पक्षी या मनुष्य की है, उसी तरह कविता में भी बिंबों के माध्यम से आप समझ जाते हैं कि बात किसके बारे में की जा रही है। प्रस्तुत पंक्तियों से किसका बोध हो रहा है। इस तरह बिंब-विधान के माध्यम से कविता में न सिर्फ कथ्य को रोचक तरीके से प्रस्तुत करने में, बल्कि पाठक के मन में एक प्रभावशाली तस्वीर रचने में भी मदद मिलती है।

यथार्थवादी रचनाओं का उद्देश्य समाज, राजनीति और अर्थव्यवस्था की वास्तविक स्थितियों का चित्रण करना था। प्रगतिवादी आंदोलन के मानकों के अनुरूप यथार्थवाद के चलन में न सिर्फ कथन की भंगिमा बदली, बल्कि शब्दों के चुनाव में भी बदलाव आया। कहा गया कि बातों को घुमा-फिरा कर, किसी सुंदर आवरण में लपेट कर कहने के बजाय सीधे-सीधे कहा जाना चाहिए। इस तरह कविता में बातचीत की शैली आई। शब्दों में कठोरता आई। कोमल पदावलियों को जानबूझ कर त्याग दिया गया। परिणाम यह हुआ कि कविता में कथन महत्त्वपूर्ण हो गया। प्रतीकों-बिंबों का मोह समाप्त हो गया।